International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 8 Issue 1 Ser. II || January 2019 || PP 93-96

अहिन्दीभाषी क्षेत्रों का हिन्दी के प्रति दृष्टिकोण तथा ऐसे राज्यों के हितार्थ राजभाषा हिन्दी के अबाध प्रयोग पर संवैधानिक प्रतिबन्ध

डा. ईशा शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर
इतिहास विभाग
एम.एम.एच. कॉलेज,गाजियाबाद

सारांश
भारत राष्ट्र विभिन्न संस्कृतियों एवं भाषाओं का संगम है। इस देश की विशाल जनसंख्या है, अनेक भाषाएं बोली व लिखी जाती हैं। यहां 1652 से अधिक भाषाएं बोली जाती हैं, जिनमें 63 भाषाएं अभारतीय हैं।[1] संविधान सभा के सम्मुख भारत की राजभाषा चुनने तथा भाषा संबंधी नीति निर्धारक उपबंध बनाने का एक विकट कार्य था। संघ व राज्यों के मध्य तथा विभिन्न राज्यों के आपसी पत्राचार के माध्यम के रूप में इन्हीं भाषाओं में से चयन किया जाना था, जिससे देश के विभिन्न भाषायी क्षेत्रों में यह संदेश न जाए कि उन्होंने किसी भाषा विशेष अथवा क्षेत्र विशेष के पक्ष में अथवा किसी भाषा के विरूद्ध भेदभाव किया है।यह सर्वविदित तथ्य है कि सन् 1857 में प्रारम्भ हुए तथा 90 वर्ष चले स्वतन्त्रता संग्राम में देशप्रेम के एक घटक के रूप में फारसी, अरबी व अंग्रेजी से इतर[2] भारत की देशी भाषाओं का आकर्षण बढ़ा और एक राष्ट्रभाषा की अवधारणा ने जन्म लिया।

स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान सम्पूर्ण भारत में एक समान भाषा होने की परिकल्पना तत्कालीन समाज सुधारकों व राष्ट्रवादियों ने अपने–अपने शब्दों में वर्णित की है। यथा, स्वामी दयानन्द सरस्वती, जो जन्म से गुजराती थे तथा जिनका कार्यक्षेत्र मुख्यतः पंजाब था, ने उद्घोष किया "भाई, मेरी आँखें तो उस दिन को देखने को तरस रही हैं जब कश्मीर से कन्याकुमारी तक सब भारतीय एक भाषा समझने और बोलने लग जाएं।"[3] बंगाल के जस्टिस केशव चन्द्र सेन ने कहा "यदि एक भाषा के न होने के कारण भारत में एकता नहीं होती है तो और चारा ही क्या है? तब सारे भारतवर्ष में एक ही भाषा का व्यवहार करना ही एकमात्र उपाय है। अभी कितनी ही भाषाएं भारत में प्रचलित हैं, उनमें हिन्दी भाषा ही सर्वत्र प्रचलित है। इसी हिन्दी को भारतवर्ष की एकमात्र भाषा स्वीकार कर लिया जाय तो सहज ही में एकता सम्पन्न हो सकती है, किन्तु राज्य की सहायता के बिना यह कभी सम्भव नहीं है। अभी अंग्रेज हमारे राजा हैं। वे इस प्रस्ताव से सहमत होंगे, ऐसा विश्वास नहीं होता। भारतवासियों के बीच फिर फूट नहीं रहेगी, वे परस्पर एक हृदय हो जाएंगे ..... आदि सोचकर शायद अंग्रेजों के मन में भय होगा।"[4] इसी संदर्भ में लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने कहा था "राष्ट्र संगठन के लिए आज ऐसी भाषा की आवश्यकता है, जिसे सर्वत्र समझा जा सके। हिन्दी राष्ट्रभाषा बन सकती है ..... मेरी समझ में हिन्दी भारत की सामान्य भाषा होनी चाहिए यानि समस्त हिन्दुस्तान में बोली जानेवाली भाषा होनी चाहिए।"[5] भारत के संविधान निर्माताओं में अग्रणी कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी ने कहा था, "भारत के भविष्य का निर्माण राष्ट्रभाषा भारती (हिन्दी) के उद्भव और विकास के साथ सम्बद्ध है।" उन्होंने माना था कि अंग्रेजी का स्थान हिन्दी ही ले सकती है। श्री अनन्तशयनम आयंगर के शब्दों में – "विभिन्न भारतीय भाषाओं का अपना प्राचीन इतिहास और साहित्य है। अतः उनकी स्थिति अक्षुणीय रहना भी परम आवश्यक है। यह देखते हुए भी हमें अंतर–प्रांतीय सम्पर्क के लिए एक भाषा चुननी ही पड़ेगी। प्रजातांत्रिक देश में अधिकतम जनसमुदाय द्वारा बोली और समझी जानेवाली भाषा ही यह कार्य सम्पादन कर सकती है। इस दृष्टि से हिन्दी इस कसौटी पर पूरी उतरती है।"[6]

इसी प्रकार के विचार सम्पूर्ण संघर्ष के दौरान भारत के हर क्षेत्र व अंचल में व्यक्त किए गए। उस काल में हिन्दी के विरूद्ध कोई आवाज नहीं उठी। दक्षिण–पश्चिम और उत्तर–मध्य भारत के सभी क्षेत्रवासी किसी भी कीमत पर अंग्रेजों को भारत से भगाना चाहते थे। अतः किसी भी स्थानीय अथवा भारतीय भाषा के प्रति किसी विरोध का अभाव था। इस पृष्ठभूमि में हिन्दी का सामान्य जनभाषा तथा राजभाषा के रूप में विकास हुआ। हिन्दी के प्रचार–प्रसार के लिए न केवल हिन्दी प्रदेशों की जनता ने कार्य किए, अपितु अहिन्दीभाषी क्षेत्रों के समाजसेवकों, राजनीतिज्ञों, विद्वानों तथा संस्थाओं ने भी महत्वपूर्ण योगदान दिया। इनमें दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास ; राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा ; गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद ; मैसूर हिन्दी प्रचार परिषद, बैंगलोर ; महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा, पुणे ; हिन्दुस्तानी प्रचार सभा, वर्धा के नाम उल्लेखनीय हैं।

अहिन्दीभाषी क्षेत्रों में हिन्दी की स्वीकार्यता हेतु महात्मा गाँधी ने अनेकों प्रयास किए।

महात्मा गाँधी ने राष्ट्रभाषा के पांच लक्षण बताए थे, जिनकी उन्होंने समय–समय पर व्याख्या भी की तथा कहाकि इन पांच लक्षणों से युक्त हिन्दीभाषा की समता रखनेवाली दूसरी कोई भाषा है ही नहीं। उनका स्पष्ट मत था कि 'अंग्रेजी' राष्ट्र की भाषा नहीं हो सकती। उन्होंने सन् 1920 में गुजरात विद्यापीठ की स्थापना की। कांग्रेस के कानपुर अधिवेशन में[7] उन्होंने अहिन्दीभाषी क्षेत्रों में हिन्दी की स्वीकार्यता की अभिवृद्धि हेतु मांग की कि कार्यकर्ता एकत्र करके दक्षिण में हिन्दी के प्रचार की व्यवस्था की जाए। इस भावना को फलीभूत करने के लिए सन् 1925 में ही दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास का शुभारम्भ किया। मद्रास के भारत सेवा संघ[8] के युवकों ने हिन्दी प्रचारक की मांग की। गाँधीजी ने उस समय अपने पुत्र देवदास गाँधी को हिन्दी प्रचार के लिए वहां भेजा, जिनके साथ पंजाब के स्वामी सत्यदेव

परिव्राजक भी मद्रास गए। उसी काल में दक्षिण के अनेक युवक हिन्दी का सम्यक ज्ञान प्राप्त करने हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग आए और वापस जाकर हिन्दी के प्रसार में सम्पूर्ण दक्षिण में कार्यरत हो गए। तत्पश्चात हिन्दी ज्ञानार्जन के लिए दक्षिण में ही हिन्दी विद्यालयों की स्थापना राजमहेन्द्री, तिरूचिरापल्ली, मद्रास आदि स्थानों पर हुई। हिन्दी तथा अहिन्दी भाषी दोनों ही लोग हिन्दी को राष्ट्रभाषा कहकर एक राष्ट्रीय गौरव की अनुभूति करते थे।

सन् 1935 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए गाँधीजी ने बताया कि उत्कल में गोपबन्धु चौधरी, असम में बाबा राघवदास, बंगाल में रामनन्द चटर्जी किस प्रकार हिन्दी सेवा में लगे हैं। दक्षिण में हिन्दी के राष्ट्रीय निर्माण की भूमिका जिन विद्वानों ने निभायी, उनमें रामास्वामी अय्यर, डा. ऐनी बेसेंट, टी.आर. वेंकटराम शास्त्री, एन. सुंदरय्या के नाम प्रमुख हैं। काका साहेब कालेकर ने भी दक्षिण भारत में हिन्दी का अलख जगाया।[9] उन्हीं के प्रयास से असम, जगन्नाथ धाम, उत्कल, पुरी, उड़ीसा, बंगाल आदि सभी गैर–हिन्दीभाषी क्षेत्रों में हिन्दी शिक्षण संस्थाओं की स्थापना हुई।

दक्षिण भारत के राज्यों में आंध्रप्रदेश का हिन्दी के संदर्भ में प्रमुख स्थान है। वहां नगरपालिका के स्कूलों में व माध्यमिक तथा महा विद्यालयों में हिन्दी के प्रशिक्षण की व्यवस्था की गई। हैदराबाद राज्य हिन्दी प्रचार सभा व आंध्र राष्ट्र हिन्दी प्रचार संघ को इसका श्रेय जाता है। सुदूर कर्नाटक भी हिन्दी सेवा में पीछे नहीं रहा। यहां भी विद्यालयों के पाठ्यक्रमों में हिन्दी सम्मिलित की गई। केरल में हिन्दी प्रचार का कार्य मद्रास सभा द्वारा आरम्भ किया गया। मद्रास में हिन्दी प्रचारक विद्यालय की स्थापना हुई तथा एक वैकल्पिक भाषा के रूप में हिन्दी पाठ्यक्रमों में समाहित हुई। एर्णाकुलम में केरल प्रांतीय हिन्दी प्रचार सभा गठित हुई जिससे वहां हिन्दी प्रचार को गति मिली। दक्षिण भारत में हिन्दी प्रचार सभा भी इस दिशा में श्रेय की पात्र है। मद्रास विश्वविद्यालय से हिन्दी परीक्षाओं को देने का प्रावधान हुआ। पर्यवेक्षकों के अनुसार सन् 1937 के बाद का समय तमिलनाडु ही नहीं वरन् सम्पूर्ण दक्षिण के लिए हिन्दी के प्रचार प्रसार की दृष्टि से सर्वोत्तम समय था।

महात्मा गाँधी के जन्म प्रदेश गुजरात में गाँधी और सरदार बल्लभ भाई पटेल के सत्प्रयासों से राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी का समुचित प्रचार–प्रसार हुआ। मराठी साहित्य परिषद और गुजराती साहित्य परिषद, ठाकरसी महिला विद्यापीठ व राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा के प्रयास भी सराहनीय रहे। महाराष्ट्र में वहां की हिन्दी प्रचार समिति, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा, वर्धा समिति, बंबई हिन्दी विद्यापीठ जैसी अनेकों हिन्दी संस्थाओं ने हिन्दी के उन्नयन हेतु अनेक कार्य किए। 'हिन्दी विषय', 'हिन्दी माध्यम', 'हिन्दी परीक्षा', 'हिन्दी प्रचारक', 'हिन्दी विद्वान'– यहां तक कि 'विश्व हिन्दी सम्मेलन' की कल्पना और राष्ट्रभाषा हिन्दी के द्वारा वसुधैव कुटुम्बकम की भावना को प्रश्रय यदि कहीं मिला तो वह महाराष्ट्र की भूमि में मिला। वहीं से राष्ट्रभाषा ही नहीं वरन् विश्वभाषा के रूप में हिन्दी को विकसित करने का अंकुरण हुआ।[10]

पंजाब में हिन्दी विद्वानों के साथ–साथ सिख सम्प्रदाय के गुरू भी हिन्दी के पक्षधर रहे। तत्पश्चात वहां सनातन धर्म सभा का आंदोलन प्रमुखतः हिन्दी माध्यम में ही था। स्वामी दयानन्द जन्म से गुजरात के थे परन्तु पंजाब में आर्यसमाज की स्थापना उन्हीं के द्वारा की गई। आर्यसमाज द्वारा स्थापित स्कूल, कॉलेजों में हिन्दी की प्रधानता रही। लाला लाजपत राय जैसे राष्ट्र ख्याति प्राप्त नेताओं ने स्वयं हिन्दी सीखकर राष्ट्र के समक्ष एक आदर्श प्रस्तुत किया।

उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश एवं बिहार आदि हिन्दीभाषी राज्यों में तो हिन्दी का विकास स्वाभाविक था परन्तु ऊपर वर्णित अहिन्दीभाषी सभी राज्यों में स्व और राष्ट्र की भावना से प्रेरित होकर हिन्दी के प्रचार–प्रसार में कोई व्यवधान उत्पन्न नहीं हुआ वरन् सबने एक कंठ से हिन्दी को राष्ट्रभाषा तथा सम्पर्क भाषा के रूप में ग्रहण किया। इससे उत्साहित होकर हमारे संविधान निर्माताओं ने एक ओर हिन्दी को संविधान में भारत संघ की राजभाषा का दर्जा दिया तो दूसरी ओर अहिन्दीभाषी क्षेत्रों की जनता की स्थानीय समस्याओं को ध्यान में रखते हुए हिन्दी के अखिल भारतीय निर्बाध प्रयोग पर कुछ अंकुश व कुछ प्रतिबन्ध भी लगा दिए।

अहिन्दीभाषी क्षेत्रों के हित में राजभाषा हिन्दी के प्रयोग पर भारतीय संविधान के राजभाषा शीर्षक के अन्तर्गत संवैधानिक प्रतिबन्ध लगाए गए हैं। अनुच्छेद 343 से 351 तक प्रावधानों द्वारा एक ओर हिन्दी को भारत संघ की 'राजभाषा' और उसकी लिपि 'देवनागरी' को घोषित करता है, दूसरी ओर उसके प्रयोग के सन्दर्भ में इतने 'किन्तु', 'लेकिन' व 'परन्तु' लगाता है कि राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित हुए लगभग 70 वर्षों के उपरान्त भी हिन्दी इन्हीं प्रतिबन्धों के मायाजाल में फंसकर रह गई है।[11] 21वीं सदी के प्रारम्भिक वर्षों में पुनः हिन्दी से अंग्रेजी की ओर लौटने की उत्कंठा प्रकट हुई है। उदाहरणार्थ उत्तर प्रदेश सरकार ने ग्रामीण अंचलों के स्कूलों में 'अंग्रेजी' को अनिवार्य घोषित करने का निर्णय लिया तथा उत्तर प्रदेश माध्यमिक शिक्षा परिषद ने अंग्रेजी माध्यम में शिक्षा प्रदान करने वाले माध्यमिक विद्यालयों को मान्यता देने का प्रस्ताव पारित कर दिया।[12] वास्तव में संविधान के अंतर्गत हिन्दी के प्रयोग पर जो प्रतिबंध लगाए गए थे उनका उद्देश्य अहिन्दीभाषी राज्यों की जनता को अल्पकालीन दृष्टि से भाषायी परिवर्तन की सुविधा प्रदान करना तथा दीर्घकालीन दृष्टि से हिन्दी को उत्तरोत्तर राष्ट्रभाषा के पद पर अग्रसारित करना था। परन्तु कालान्तर में इन प्रतिबन्धों का राजनैतिक उपयोग होने लगा। भाषा क्षेत्रवाद का एक आधार बन गई और भाषागत आधार पर नए राज्यों

के गठन की मांग उठने लगी है। निम्न पंक्तियों में हम संविधान के उन उपबन्धों का उल्लेख करेंगे जो अहिन्दीभाषी क्षेत्रों की सुविधार्थ रचित किए गए हैं :–

1. संसद व राज्यों के विधानमण्डलों में सदस्यों को मातृभाषा में सम्बोधन की छूट हेतु संविधान के अनुच्छेद 120(1) में प्रावधान किया गया है। संविधान के भाग–17 में[13] किसी बात के होते हुए भी, किन्तु अनुच्छेद 348 के उपबन्धों के अधीन रहते हुए[14] संसद में कार्य हिन्दी में या अंग्रेजी में किया जाएगा, परन्तु यथास्थिति, राज्यसभा का सभापति या लोकसभा का अध्यक्ष अथवा इस रूप में कार्य करनेवाला व्यक्ति, किसी सदस्य को, जो हिन्दी या अंग्रेजी में पर्याप्त अभिव्यक्ति नहीं कर सकता, उसे उसकी मातृभाषा में सदन को सम्बोधित करने की अनुज्ञा दे सकेगा। इसी भांति, अनुच्छेद 210(1) के अन्तर्गत राज्यों के विधानमंडल में शासकीय कार्य, सम्बन्धित राज्य की राजभाषा या राजभाषाओं में या हिन्दी अथवा अंग्रेजी में किए जा सकते हैं। विधानसभा में अध्यक्ष तथा विधानपरिषद में सभापति अथवा कार्यवाहक सभापति को यह अधिकार दिया गया है कि यदि कोई सदस्य पूर्वोक्त भाषाओं में से किसी में भी अपनी पर्याप्त अभिव्यक्ति नहीं कर सकता है तो उसे उसकी मातृभाषा में सदन को सम्बोधित करने की वह अनुज्ञा दे सकेगा।[15]

2. संघ की राजभाषा के रूप में हिन्दी के उपयोग पर प्रतिबन्धों का स्वरूप इस प्रकार रहा : अनुच्छेद 343 द्वारा हिन्दी को भारत संघ की राजभाषा तो घोषित कर दिया गया परन्तु यह निम्न प्रतिबन्धों के अधीन है :–

क. संविधान के लागू होने के पन्द्रह वर्षों की अवधि तक संघ के उन शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा, जिनके लिए उसका संविधान के लागू होने के ठीक पहले प्रयोग किया जा रहा था।[16]

ख. उक्त पन्द्रह वर्ष की अवधि के पश्चात भी संसद विधि बनाकर अंग्रेजी भाषा का किन्हीं प्रयोजनों के लिए उपबन्ध कर सकेगी।

ग. अनुच्छेद 344 राष्ट्रपति को यह अधिकार प्रदान करता है कि वह संविधान प्रारम्भ होने से पांच वर्ष की समाप्ति पर पुनः पन्द्रह वर्ष की समाप्ति पर आदेश द्वारा ऐसा आयोग गठित करेगा जिसमें संविधान की आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट विभिन्न भाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले सदस्य नियुक्त होंगे। यह आयोग अन्य प्रयोजनों के अतिरिक्त संघ की राजभाषा तथा संघ व किसी राज्य के बीच या एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच पत्रादि की भाषा व उनके प्रयोग के विषय में सिफारिश करेगा।

यह विशेष रूप से उल्लिखित किया गया है कि अपनी सिफारिशें करते समय उपरोक्त आयोग भारत की औद्योगिक, सांस्कृतिक एवं वैज्ञानिक उन्नति का और लोक सेवाओं के सम्बन्ध में अहिन्दीभाषी क्षेत्रों के व्यक्तियों के न्यायसंगत दावों और हितों का सम्यक् ध्यान रखेगा।[17] ऐसे आयोग द्वारा की गई सिफारिशों के पुनः परीक्षण हेतु लोकसभा के बीस तथा राज्यसभा के दस सदस्यों को मिलाकर एक समिति गठित की जाएगी, जो आयोग की सिफारिशों की परीक्षा करके राष्ट्रपति को उन पर अपनी राय भेजेगी। अन्तिम निर्णय का अधिकार राष्ट्रपति को होगा।

3. राज्य की राजभाषा निर्धारण का अधिकार राज्यों के विधान मण्डलों में निहित है। अनुच्छेद 345 प्रत्येक राज्य के विधान मण्डल को यह अधिकार प्रदान करता है कि वह विधि बनाकर उस राज्य में प्रयोग होनेवाली भाषाओं में से किसी एक या अधिक भाषाओं को या हिन्दी को उस राज्य के सभी या किन्हीं शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जानेवाली भाषा या भाषाओं के रूप में राज्य की भाषा अंगीकार कर सकेगा। ऐसा निर्धारण होने तक राज्य के भीतर उन शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग पूर्ववत किया जाता रहेगा।

4. राज्यों व जनसमुदायों की प्रादेशिक व स्थानीय भाषाओं को शासकीय संरक्षण का प्रावधान है। वैसे तो अनुच्छेद 346 संघ की राजभाषा को ही राज्यों के मध्य पत्रादि की भाषा घोषित करता है परन्तु अनुच्छेद 347 राष्ट्रपति को अधिकार प्रदान करता है कि यदि राष्ट्रपति का समाधान हो जाता है कि किसी राज्य की जनसंख्या का पर्याप्त भाग यह मांग करता है कि उसके द्वारा बोली जानेवाली भाषा को राज्य द्वारा मान्यता दी जाए तो राष्ट्रपति यह निर्देश दे सकेगा कि ऐसी भाषा को उस राज्य में सर्वत्र या उसके किसी भाग में ऐसे प्रयोजन के लिए, जो वह विनिर्दिष्ट करे, शासकीय मान्यता दी जाए।

उपरोक्त प्रावधान अहिन्दीभाषी राज्यों के विभिन्न अंचलों में बसे हुए और विभिन्न बोलियों व लिपि का उपयोग करनेवाली जनता के भाषायी हितों की सुरक्षा हेतु किए गए हैं, जो प्रशंसनीय है।

5. उच्चतम न्यायालयों में अंग्रेजी का वर्चस्व परन्तु उच्च न्यायालयों में स्थानीय भाषाओं के प्रयोग की छूट का प्रावधान है। अनुच्छेद 348 प्रावधान करता है कि जब तक संसद विधि द्वारा अन्यथा घोषित न करे, उच्चतम न्यायालय तथा प्रत्येक उच्च न्यायालय में कार्यवाहियों की भाषा अंग्रेजी होगी। लेकिन इस प्रावधान का एक महत्वपूर्ण अपवाद यह है कि किसी राज्य का राज्यपाल, राष्ट्रपति की पूर्व सहमति से उस उच्च न्यायालय की कार्यवाहियों में, जिसका मुख्य स्थान उस राज्य में है, हिन्दीभाषा का या उस राज्य के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होनेवाली किसी अन्य भाषा का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगा।[18]

6. अभ्यावेदन प्रस्तुत करने, मातृभाषा में शिक्षा ग्रहण करने तथा भाषायी अल्पसंख्यक वर्गों के हितार्थ, संविधान का अनुच्छेद 350, भारत में प्रत्येक व्यक्ति को यह अधिकार प्रदान करता है कि वह किसी शिकायत को दूर करने के लिए संघ या राज्य के किसी अधिकारी को यथास्थिति संघ में या राज्य में प्रयोग होनेवाली किसी भाषा में अभ्यावेदन प्रस्तुत

कर सकेगा। वर्ष 1956 में संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम द्वारा अनुच्छेद 350क तथा 350ग जोड़े गए हैं, जिनके अन्तर्गत भाषायी अल्पसंख्यक वर्गों के हितों की सुरक्षार्थ प्रावधान किए गए हैं। एक – यह कि प्रत्येक राज्य और राज्य के भीतर एक स्थानीय प्राधिकारी, भाषायी अल्पसंख्यक वर्गों के बालकों को शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर उसकी अपनी मातृभाषा में शिक्षा की पर्याप्त सुविधाओं की व्यवस्था करने का प्रयास करेगा। राष्ट्रपति भी इस सम्बन्ध में निर्देश दे सकता है। दूसरा– भाषायी अल्पसंख्यक वर्गों के लिए एक विशेष अधिकारी होगा, जिसकी नियुक्ति राष्ट्रपति करेगा। ऐसे विशेष अधिकारी का यह कर्तव्य होगा कि वह संविधान के अधीन भाषायी अल्पसंख्यक वर्गों के लिए उपबंधित रक्षा उपायों से सम्बन्धित विषयों का अन्वेषण करे और उन विषयों के सम्बन्ध में ऐसे अंतरालों पर, जो राज्यपाल निर्दिष्ट करें, राष्ट्रपति को रिपोर्ट दे तथा राष्ट्रपति ऐसी सभी रिपोर्टों को संसद के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगा और सम्बन्धित राज्यों को भिजवाएगा।

7. संविधान की अष्टम अनुसूची में अहिन्दीभाषी क्षेत्रों की सभी मुख्य भाषाओं को सम्मिलित किया गया है। अनुच्छेद 344(1) और 351 के अन्तर्गत उपरोक्त वर्णित भाषायी हितों की सुरक्षा हेतु गठित आयोग व समितियों का जिन भाषाओं को संरक्षित करने का संवैधानिक दायित्व है, उनमें असमिया, बांग्ला, गुजराती, हिन्दी, कन्नड़, कश्मीरी, कोंकणी, मलयालम, मणिपुरी, मराठी, नेपाली, उड़िया, पंजाबी, संस्कृत, सिंधी, तमिल, उर्दू, तेलुगु, बोडो, डोगरी, मैथिली तथा संथाली कुल 22 भाषाएं संविधान की अष्टम अनुसूची में सम्मिलित हैं। इन भाषाओं में अहिन्दीभाषी क्षेत्रीय राज्यों की लगभग सभी मुख्य भाषाएं समाहित करके सभी राज्यों के भाषायी हितों को ध्यान में रखा गया है।

स्वतन्त्रता संग्राम के क्रांतिकारी नायक सुभाष चन्द्र बोस ने कहा था "देश की एकता के लिए एक भाषा का होना जितना आवश्यक है, उससे अधिक आवश्यक है देशभर के लोगों में देश के प्रति विशुद्ध प्रेम तथा अपनापन होना। अगर आज हिन्दी मान ली गई तो वह अपनी सरलता, व्यापकता और क्षमता के कारण। वह किसी प्रांत विशेष की भाषा नहीं बल्कि सारे देश की भाषा हो सकती है।" हिन्दी के प्रति एक क्रांतिकारी के यह उद्‌गार आज भी उतने ही जीवंत हैं जितने तत्कालीन भारत में थे। भारत के गणतन्त्र बनने के पश्चात यह आशा जगी थी कि हिन्दी को संविधान के अन्तर्गत जो राजभाषा का दर्जा दिया गया है वह भविष्य में निश्चित ही 'राष्ट्र–भाषा' में परिणत हो जाएगा और हिन्दी को सम्पूर्ण भारत की सामान्य शासकीय भाषा बनाकर हम अंग्रेजी की अनिवार्यता को समाप्त कर देंगे, परन्तु खेद है, ऐसा नहीं हो पाया। अंग्रेजी पुनः भारत में सिर उठा रही है। जहां तक अहिन्दीभाषी क्षेत्रों की भाषाओं का सम्बन्ध है, संविधान की अष्टम सूची में सभी का समावेश है तथा राज्यस्तर पर स्थानीय भाषाओं के प्रयोग की पूर्ण छूट है तथा ये सभी भाषाएं संरक्षित हैं। इतिहास साक्षी है कि स्वतन्त्रता संग्राम के समय किसी अहिन्दीभाषी क्षेत्र में हिन्दी को एक सर्वमान्य भाषा, यहां तक कि राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार किए जाने पर कोई प्रकट आपत्ति दर्ज नहीं की गई, परन्तु स्वतन्त्र भारत में राजनैतिक कारणों से भाषाएं क्षेत्रवाद का आधार बन गई हैं, जो राष्ट्र की एकता, अखण्डता व समरसता के लिए कदापि उचित नहीं है। भाषाएं तो व्यक्तियों व समुदायों के सम्पर्क का एक माध्यम हैं तथा सम्पूर्ण भारत को यदि एक सूत्र में कोई भाषा पिरो सकती है तो वह हिन्दी ही है।

संदर्भ सूची

01. दुर्गादास बसु, भारत का संविधान–एक परिचय (द्वितीय संस्करण), पृष्ठ 361
02. ये विदेशी भाषाएं थीं
03. कैलाश चन्द्र भाटिया, हिन्दी भाषा : विकास और स्वरूप (2004), पृष्ठ 141
04. कैलाश चन्द्र भाटिया, हिन्दी भाषा : विकास और स्वरूप (2004), पृष्ठ 142
05. कैलाश चन्द्र भाटिया, हिन्दी भाषा : विकास और स्वरूप (2004), पृष्ठ 143
06. कैलाश चन्द्र भाटिया, हिन्दी भाषा : विकास और स्वरूप (2004), पृष्ठ 143
07. कानपुर अधिवेशन, 1925
08. इंडियन सर्विस लीग, मद्रास
09. कैलाश चन्द्र भाटिया, हिन्दी भाषा : विकास और स्वरूप (2004), पृष्ठ 150
10. कैलाश चन्द्र भाटिया, हिन्दी भाषा : विकास और स्वरूप (2004), पृष्ठ 154–57
11. डा. बसंती लाल बाबेल, भारत का संविधान (तृतीय संस्करण), पृष्ठ 467
12. सम्पादकीय, दैनिक जागरण (मेरठ संस्करण), दिनांक 08फरवरी, 2010
13. संविधान का भाग 17, राजभाषा के सम्बन्ध में
14. भारत का संविधान, अनुच्छेद 348
15. उपरोक्त
16. भारत का संविधान, अनुच्छेद 343 खण्ड (1)
17. भारत का संविधान, अनुच्छेद 344
18. अनुच्छेद 344 खण्ड (2)